" विनाश "

देवेन्द्र कुमार मिश्रा
छिन्दवाड़ा, मध्य प्रदेश

विनाश

जमीन के नीचे
तस्वीर खींचे
धरती को चीरकर
गढ़े हैं असंख्या पाइप
दो सौ से आठ सौ
और हजार फिट गहरे तक
जो खींच रहे हैं पानी
बहुत नीचे से
थर–थर कांप रही है धरती
जैसे किसी शरीर में
चुभी हो असंख्य सुईयाँ
कंपन करे धरा
जो स्वाभाविक है
कुँए सूखे
ताल सूखे
नदियॉ भी सूख गई
तुम्हारे लोभ से
बढ़ते उपभोग से
बढ़ती संख्या से
फिर भी तुम न माने
तुमनें जमीन
खोद–खोदकर
बहुत गहरे तक
रोंद–रोंदकर
पानी तलाशा उसके बाद
क्या होगा
नहीं सोचा
इतने पर भी नहीं माने तुम
विकास की अंधी दौड़ में
तुमनें खेत बेचे
मकान बनाये
खड़ी की बड़ी–बड़ी इमारतें
पेड़ काटे
पहाड़ काटे
लगाये कारखानें
मोटर कारों का पर्याय
बना दिया शहरों को
और अब जब बढ़ रही है तपन
पिघल रही है बर्फ
सांस लेना दूभर हो रहा है
ग्लोबल वार्मिंग और भूकम्प से
दुनियाँ खड़ी है
विनाश की कगार पर
तब भी मढ़ रहे हो दोष
दूसरों पर
अब भी समय है
संभल जाओ
अन्यथा विनाश तो
आता जा रहा है
निकट और निकट

"नासमझी"

पेट अधिक हैं
रोटी कम है
बढ़ते ही जा रहें पेट
ओर घटता ही
जा रहा अनाज
और पानी
बनती ही
जा रही हैं इमारते
और कम
होते जा रहे हैं खेत

सबका पैसा बैको में
इन्श्योरेंस में
व्यापार में
भविष्य की सुरक्षा के लिए
बिना रोटी कैसी सुरक्षा

बिना पानी कैसा जीवन
ये कैसी मूढ़ता है
रोटियाँ तिजोरी में
नहीं रखी जा सकती
पानी घरों में नहीं
जोड़ा जा सकता
भूखे पेट
प्यासे कंठ
और विकास की बातें
ये कैसी नासमझी है।
ये कैसा विकास ह

"अपने हिस्से की रोटी"

हमसे छीनी जा रही है
हमारी जमीने
हमारे जंगल
और उखाड़कर फेंका जा रहा है
हमें उद्योगपतियों के विकास के लिए
हमें मिले तो सिर्फ आश्वासन
न विकास मिला
न हिस्सा
न रोजगार
हम क्या करें
हमारी रोटी
हमारी आबरू
कैद है उनकी तिजोरियों में
हम भूख और प्यास से हलाकान
और वे खाकर उल्टी
कर रहे हैं
कि खा सके फिर
क्या बचता है हमारे हाथ
कौन देता है हमारा साथ
क्या करें ?
कहां जायें
बन्दूक का रास्ता
हमारा नही है
किन्तु इसके अलावा कोई रास्ता नहीं है
या तो मुझे मेरेहिस्से
की रोटी दो
या नक्सली कहकर
मार दो मुझे मुठभेड़ में
मरना तो है ही हमें
बन्दूक के सहारे
दो–चार दिन
ज्यादा जी सकते हैं
छीन सकते है अपने
हिस्से की रोटी
जब तक मारे न जायें
अपनी ही पुलिस के हाथों